भारत परिषद अधिनियम, 1892(भाग-3)

THE INDIAN COUNCIL ACT,1892

For :P.G.Sem-3,CC-13,Unit-4

अधिनियम का मूल्यांकन

1892 का अधिनियम 1861 के भारतीय परिषद अधिनियम से एक कदम आगे का चीज था। काउंसिल की शक्ति और कार्य में बढ़ोतरी कर दी गई और उनका आकार भी बढ़ा दिया गया। अब 16 सदस्यों की इंपीरियल काउंसिल में 10 गैर सरकारी सदस्य मनोनीत होने लगे जिनमें से 5 को तो विभिन्न भारतीय संस्थाएं सिफारिश द्वारा मनोनीत कराती थी। उन्हें काउंसिल में जाकर केवल मूक होकर सरकारी नीतियों का समर्थन ही नहीं करना था बल्कि सदस्य प्रश्न पूछ सकते थे तथा इस प्रकार कार्यकारिणी से जो सूचना चाहे प्राप्त कर सकते थे। भारत के इतिहास में पहली बार जनता के प्रतिनिधियों को चाहे वह अप्रत्यक्ष रूप से ही चुने जाते थे यह अधिकार दिया गया कि वे शासकों से सूचना प्राप्त कर सके।

- सदस्यों को बजट पर साधारण विचार व्यक्त करने तथा व्यय में कमी तथा बढ़ोतरी करने के लिए सुझाव देने का अधिकार मिल गया। यह भी एक महत्वपूर्ण घटना थी। हालांकि अभी भी उन्हें पूरक प्रश्न पूछने एवं बजट पर मतदान करवाने का अधिकार नहीं था।
- विधानमंडल के अधिकार बढ़ जाने के कारण देश के सबसे प्रतिभाशाली लोग इनमें आने लगे। इनमें गोपाल कृष्ण गोखले, आशुतोष मुखर्जी, रासबिहारी बोस तथा सुरेंद्रनाथ बनर्जी जैसे प्रमुख भारतीय नेता तथा बुद्धिजीवी विधानमंडल में प्रवेश कर सके। इनकी वाक्पटुता, राजनीतिक बुद्धि ने शिक्षित भारतीयों की संसदीय शक्तियों और देशभक्ति को पर्याप्त मात्रा में

Scanned with CamScanner

वयक्त किया। इन्होंने अपने सुझावों तथा आलोचना से सरकारी नीतियों को प्रभावित किया तथा अब तक उन्हें अयोग्य करार दिए जाने वाली बात को बेमानी साबित कर दिया।

- वहीं दूसरी नजरिए से देखा जाए तो अंश मात्र ही सही अंग्रेजी शासकों एवं साम्राज्यवादियों को इससे कुछ लाभ अवश्य हुआ। 1892 के सुधारों ने कांग्रेस आंदोलन की गति को धीमा किया क्योंकि अनेक प्रमुख नेता प्रांतीय और इंपीरियल काउंसलिंग में शामिल हो गए थे। 1894 और 1900 ई. के बीच कांग्रेस अधिवेशन में काउंसिल सुधारों की आम मांग कांग्रेस के कार्यक्रम का मुख्य मुद्दा नहीं रही । **कैम्ब्रिज संप्रदाय** की इतिहासकारों जिसमें **अनिल सील** प्रमुख है का मानना है कि भारतीय लोगों को सरकार में अधिक जगह और अधिकार दिए जाने के पीछे भारतीयों को साम्राज्यवादी लक्ष्यों की पूर्ति की दिशा में जुटाने का लक्ष्य था।

- राष्ट्र वादियों का मानना था कि यह अधिनियम एक प्रकार से समझौता था जो अनिच्छा से पारित किया गया था। उसने घुमावदार निर्वाचन पद्धति की कड़े शब्दों में निंदा की। यह कहा गया कि स्थानीय निकायों को चुनाव मंडल बनाना एक प्रकार का इनके द्वारा मनोनीत करना ही है और यह भी सरकार की इच्छा पर ही निर्भर है कि इस चुने हुए प्रतिनिधि को स्वीकार करें अथवा ना करें। चुनाव में कुछ वर्गों को कोई प्रतिनिधि नहीं मिला था तथा अन्य को अत्यधिक। बम्बई में यूरोपीय व्यापारियों को दो स्थान दिए गए तथा भारतीयों को एक भी नहीं।
- राष्ट्र वादियों का कहना था कि विधान मंडलों की शक्तियां भी बहुत कम थी। सदस्य अनुपूरक प्रश्न भी नहीं पूछ सकते थे। सरकार कारण बताए बिना किसी भी प्रश्न का उत्तर देने से इंकार कर सकती थी और इसका कोई समाधान भी नहीं था।

Scanned with CamScanner

- परिषदों को बजट पर भी कोई विशेष अधिकार नहीं दिया गया था। इस संदर्भ में **गोपाल कृष्ण गोखले** का यह कथन महत्वपूर्ण है कि **अधिनियम के वास्तविक प्रचलन ने ही उसके खोखलेपन का प्रदर्शन किया।**

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि 1892 का अधिनियम यद्यपि कांग्रेस के मांगों से काफी कम था परंतु यह समकालीन स्थिति में निश्चय ही विकास की ओर अगला कदम था। प्रतिनिधियों के चुनाव तथा विधान मंडल को कार्यकारिणी पर थोड़ा सा प्रभावित करने की शक्ति दे कर इस अधिनियम ने संसदीय उत्तरदाई सरकार के आरंभ करने का मार्ग प्रशस्त किया वहीं दूसरी ओर साम्राज्यवादीयों ने सुधार रूपी चारे को फेंक कर भारतीयों को कुछ समय के लिए तुष्ट करने की नीति में सफलता पाई। वह किसी खास वर्ग को अपनी ओर मिलाने की नीति में सफल रहें जिसने की **मिंटों** के **फूट डालो और शासन** करो की नीति की पृष्ठभूमि तैयार कर दी जिसे हम 1909 ई. के सुधारों में देखते है। बहुत ही सफाई से ब्रिटिश साम्राज्य वादियो ने राष्ट्र वादियों को फुसलाया था तथा उनकी प्रमुख मांगों को अगली किस्त के लिए टाल दिया था।

BY: ARUN KUMAR RAI
Asst.Professor
P.G. Dept. Of History
Maharaja College
Ara.

Scanned with CamScanner